International Journal of Advance and Applied Research (IJAAR)
Peer Reviewed Bi-Monthly

ISSN – 2347-7075
Impact Factor – 7.065
Vol.7 No.4 Mar–Apr 2020

हिंदी सिनेमा में साहित्य और समाज

तुकाराम पाराजी गावंडे,
सहा.प्राध्यापक,
शिवछत्रपती महाविद्यालय,पाचोड,
त. पैठण, जि. औरंगाबाद.
Email Id - tpgawande@gmail.com

भूमिका:-

आधुनिक तकनीक से सुसज्जित, जीवन के विभिन्न पहलुओं को प्रस्तुत करने वाला, नवजीवन के युग का सूत्रपात करने वाली चौसठ कलाओं का सशक्त माध्यम सिनेमा है। जो न केवल हमें हमारे देश, हमारी संस्कृति से अवगत कराता है, बल्कि पलक झपकते ही इस विदेशी सभ्यता और संस्कृति को हमारे सामने प्रस्तुत करता है और हमें हमारी संस्कृति से और गहराई से जोड़ता है। शायद इसीलिए पं. जवाहर लाल नेहरू ने इसे "विश्व सभ्यता और संस्कृति को देखने की खिड़की" कहा था। सिनेमा हमें समाज में अच्छी और बुरी चीजों को दिखाता है और हमें उनके खिलाफ लड़ने के लिए प्रेरित करता है। साहित्य सभी के हित में सफल रहा है। जबकि सिनेमा के बीच संबंध और साहित्य जनता के लिए उपयोगी रहा है, साथ ही साहित्यिक कृति के मूल रूप में परिवर्तन ने लेखक को भी दुखी किया है। सिनेमा ने साहित्य को आम आदमी तक पहुँचाया है। साहित्य अपने में रचनात्मक मंच पर पढ़ने-लिखने तक ही सीमित था, लेकिन सिनेमा से जुड़कर यह गांव-गांव, पढ़े-लिखे, अशिक्षित, मजदूर, किसान, गृहिणी के लिए मनोरंजन और परामर्श का माध्यम बन गया है। इसे कई आयामों में देखा और विश्लेषित किया जा सकता है जैसे- विगत, भूत, वर्तमान और भविष्य सिनेमा है। सिनेमा कवि की कल्पना, लिखित विचार, अच्छी और बुरी स्मृतियों, भूत और भविष्य की स्मृति और सभी साहित्यिक विधाओं के संतुलित संगम का आविष्कार है। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। इसका उदय और विकास समाज में होता है, जन्म के साथ ही व्यक्ति इस सामाजिक संस्था से जुड़ता है, आदि से लेकर आज तक समाज व्यक्ति को प्रभावित करता रहता है और व्यक्ति इसमें रहकर जीवन का अर्थ खोजता रहता है। एक अकेले व्यक्ति का जीवन उसे पाषाण युग में ले जा सकता है, इसलिए समाज में रहकर व्यक्ति अपनी सभ्यता, संस्कृति और परंपराओं को बनाए रखता है और एक समाज के रूप में एक पेड़ के नीचे अपना जीवन व्यतीत करता है। व्यक्ति के सर्वांगीण विकास के लिए समाज संस्था की स्थापना की गई, जन्म से लेकर मृत्यु तक व्यक्ति समाज की इसी संस्था में बढ़ता और फलता-फूलता है। विशिष्ट व्यक्तियों के लिए जीवन की ऊँचाइयों को छूने और अपने अस्तित्व के उद्देश्य के लिए समाज एक संस्था के रूप में कार्य करता है।

साहित्य समाज समाज का दर्पण नहीं, बल्कि उसका दीपक भी होता है, दशा ही नहीं दिशा दिखाता है। दूसरे शब्दों में साहित्य का उद्देश्य केवल मनोरंजन करना ही नहीं है, अपितु इसका उद्देश्य समाज का मार्गदर्शन करना भी है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल साहित्य को 'चित्तवृत्ति का संचित प्रतिबिम्ब मानते हैं।पंडित बालकृष्ण भट्ट ने 'साहित्य को जनसमूह के हृदय का विकास माना है।' "मानव सभ्यता के विकास में साहित्य का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। विचारों ने साहित्य को जन्म दिया और साहित्य ने मानव विचारधारा को गतिशीलता प्रदान की और उसे सभ्य बनाया। मानव विचारधारा में परिवर्तन लाने का कार्य साहित्य द्वारा किया जाता है। इतिहास साक्षी है कि किसी भी राष्ट्र या समाज में आज तक जितने भी परिवर्तन आए हैं, वे सभी साहित्य के माध्यम से आए हैं।"[1] लेखक अपने साहित्य के लिए इस विषय को समाज से ग्रहण करता है। वास्तव में साहित्य पूरी तरह से समाज से प्रभावित होता है। किसी भी व्यक्ति के साहित्य से देश, लोगों के जीवन, संस्कृति, सभ्यता और अतीत की घटनाओं को जाना जा सकता है। लिखना और दूसरों को व्यक्त करना सीखा, फिर साहित्य और समाज में आदान-प्रदान की प्रक्रिया भी शुरू हुई। इस दृष्टि से दोनों के बीच का रिश्ता ऐसा है जैसी आत्मा और शरीर। जैसे आत्मा अमर है, वैसे ही साहित्य भी अमर है। योननागोची के शब्दों में "समाज नष्ट हो सकता है। राष्ट्र भी नष्ट हो सकता है लेकिन साहित्य कभी नष्ट नहीं हो सकता।"[2] वर्तमान युग में मीडिया समाज के मनोरंजन और मार्गदर्शन का एक सशक्त माध्यम बनकर उभरा है। संचार माध्यमों में सिनेमा एक ऐसा दृश्य माध्यम है जिसने संचार और मनोरंजन के साधनों में समाज को सबसे अधिक प्रभावित किया है। जवाहरलाल नेहरु के शब्दों में, वर्तमान युग में यदि किसी कला माध्यम का सबसे अधिक प्रभाव है, तो निस्संदेह वह फिल्में हैं।"[3] डॉ.कालिदास नाग सिनेमा को परिभाषित करते हुए लिखते हैं, "अपने वास्तविक अर्थ में सिनेमा केवल गतिशील खिलौना का चित्र मात्र नहीं है प्रत्युत वह जन शिक्षण का बड़ा ही प्रभावशाली माध्यम है।"[4] जीवन को मंच पर बजाता जाता है और वैज्ञानिक उपकरणों द्वारा प्रस्तुत किया जाता है। सत्यजीत रे के अनुसार- "एक फिल्म एक चित्र है, फिल्म आंदोलन है, फिल्म एक शब्द है, फिल्म एक नाटक है, फिल्म कहानी है, फिल्म संगीत है, फिल्म हजारों अभिव्यक्ति श्रव्य तथा दृश्य आख्यान है।"[5]

आज सिनेमा मनोरंजन और ज्ञान के विकास का एक प्रमुख माध्यम बनता जा रहा है। हमीदउद्दीन महमूद के शब्दों में- "सिनेमा जनता तक पहुंचनेवाला सबसे अच्छा माध्यम है।"[6] साहित्य और सिनेमा दोनों ही ऐसे माध्यम हैं जिनमें समाज में बदलाव लाने की सबसे बड़ी ताकत होती है। ये दोनों घनिष्ठ रूप से संबंधित हैं। गुलजार के शब्दों में- "साहित्य और सिनेमा का सम्बन्ध एक अच्छे अथवा बुरे पडोसी, मित्र या सम्बन्धी की तरह एक दूसरे पर निर्भर है।"[7] साहित्य और सिनेमा का मुख्य उद्देश्य आनंद का सृजन करना है और दोनों में ही समाज को नई दिशा देने की क्षमता है।जो ऐसा नहीं कर पाते वे साहित्य और सिनेमा निरर्थक हैं। डॉ. राही मासूम रजा के शब्दों में- "सिनेमा साहित्य की एक विधा है इसे भी उन्हीं तकाजों को पूरा करना चाहिए।जो दूसरी साहित्यिक विधाएं पूरी करती हैं। सिनेमा लोगों को सुख प्रदान करता है और इस सुख से वह समाज को स्वस्थ बनाने की लड़ाई लड़ता है। जिस तरह कोई नज्म़, नाविल, कहानी या साहित्य जो इस कर्तव्य को पूरा नहीं करती, वह त्रुटिपूर्ण है।"[8] जो सिनेमा समाज के साथ नहीँ चलता उसे समाज स्वीकार नहीं करता फिर चाहे वह कितने ही बड़े बजट की ही क्यों न हो या फिर कितने ही बड़े कलाकार उसमें अभिनय कर रहे हो। सिनेमा की तरह साहित्य भी समाज में होने वाली विभिन्न प्रक्रियाओं से गहराई से जुड़ा हुआ है। सिनेमा के माध्यम से प्रस्तुत की जाने वाली कहानी में विभिन्न प्रकार के पात्र या उनकी गतिविधियाँ नहीं होती बल्कि वे समाज की विभिन्न संस्थाओं के माध्यम से स्वयं को अभिव्यक्त करते हैं। इस तरह हर फिल्म एक कहानी कहती है और उनसे जुड़ी संस्थाओं के स्वरूप, चरित्र और उनके प्रति लोगों और समुदायों की सोच को प्रस्तुत करती है। जैसे फिल्म 'लज्जा' में विदेशी और भारतीय महिलाओं के दर्द की कहानी बयां की गई है। इस फिल्म का विषय पुरुष समाज द्वारा समाज के विभिन्न वर्गों में रहने वाली अमीर-गरीब सभी प्रकार की उत्पीड़ित और लांछित महिलाओं से संबंधित है।

सिनेमा भी समाज से उसी तरह प्रभावित होता है जैसे साहित्य धीरे-धीरे समाज से प्रभावित होता है। भारतीय हिंदी फिल्मों ने गांधीवाद, मानवतावाद, मार्क्सवादी, समाजवाद आदि के कई रूपों को दिखाया है। अलग-अलग दशकों में हम सिनेमा पर अलग-अलग तरह के प्रभाव देख सकते हैं।लोग फिल्में देखते हुए न केवल अपना मन बहलाते हैं बल्कि समय और समाज के बारे में नए अनुभव भी अपने साथ ले जाते हैं। यह अनुभव प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से जीवन और समाज के बारे में उनकी विचारधारा को प्रभावित करता है। उदाहरण के लिए बालक मोहनदास करमचंद गांधी, फिल्म सत्य हरिश्चंद में 'राजा हरिश्चंद' के चरित्र की ईमानदारी से इतना प्रभावित हुआ कि उसने जीवन भर सच बोलने की कसम खा ली। आज सिनेमा का प्रभाव देश के लगभग हर क्षेत्र में किसी न किसी रूप में दिखाई देता है। यहां तक कि भारतीय राजनीतिक क्षेत्र भी इससे अछूता नहीं रहा है। रेखा, जया भादुरी, धर्मेंद्र, जयललिता, सुनील दत्त आदि कई फिल्मी कलाकार संसद और विधान सभा में मंत्री बने। आज फैशन के क्षेत्र में भी सिनेप्रेमियों का दबदबा दिन-ब-दिन बढ़ता ही जा रहा है। बड़े फैशन डिजाइनर अपने फैशन शो को बढ़ावा देने के लिए कुछ फिल्मी सितारों को अपने शो का 'शोस्टॉपर' बनाते हैं। इतना ही नहीं, विद्यालयों और महाविद्यालयों में होने वाले समारोह या वार्षिक समारोह को और अधिक आकर्षक और मनोरंजक बनाने के लिए बॉलीवुड सितारों को आमंत्रित किया जाता है। बल्कि आज के युवा फिल्मी कलाकारों की तरह दिखना चाहते हैं पहनावा आदि। इस संदर्भ में लेखक श्रीप्रसून सिन्हा लिखते हैं - "सिनेमा की नकल उस समय भी लोग करते थे और आज भी करते हैं। लोग अपने जीवन के रहन-सहन के साथ-साथ विचारों से भी खासकर किशोर वर्ग सिनेमा का अनुकरण करते हैं।सिनेमा से दर्शकों का जुड़ाव गहरा है।.... आज भी हमारे मध्य ऐसे फिल्मकार हैं जिनकी सोच, तकनीकी क्षमता और प्रस्तुतिकरण की शैली में वह ताकत है जो समाज को निश्चित ही एक नई दिशा दे सकती है।"[9] भारत में फिल्म निर्माण ब्रिटिश शासन के दौरान शुरू हुआ। यहां पहली फिल्म 1913 में दादा साहब फाल्के द्वारा निर्मित और रिलीज हुई 'राजा हरिश्चंद्र' थी। यह फिल्म भारतेंदु हरिश्चंद्र के नाटक 'हरिश्चंद्र' से प्रेरित थी, जो आधुनिक हिंदी साहित्य का अग्रदूत था, जो बहुत लोकप्रिय हुआ। अर्देशिर ईरानी द्वारा निर्मित भारत की पहली बोलती फिल्म 'आलमआरा' है। शुरुआती सवाक फिल्में पारसी थिएटर से प्रभावित थीं जिसमें अधिक नाटकीय और गीतात्मक संगीत शामिल थे। हिंदी सिनेमा की शुरुआती फिल्में पौराणिक साहित्य से प्रभावित थीं। 'सत्य हरिश्चंद्र', 'लंका दहन', 'भक्त प्रह्लाद', 'कालिया मर्दन', 'अयोध्या का राजा' जैसी फिल्मों में धार्मिक ग्रंथों की कहानियों को दिखाया गया है। इसके बाद जो फिल्में बनने लगीं, उनमें सामाजिक कहानियों की कमी थी, जिन्हें समकालीन लेखकों और साहित्यिक रचनाओं ने पूरक बनाया। लेखकों में मुंशी प्रेमचंद हिंदी सिनेमा में अपनी छाप छोड़ने वाले पहले व्यक्ति थे। प्रेमचंद की कहानी पर मोहन भगनानी के निर्देशन में वर्ष 1933 में मिल मजदूर फिल्म बनी थी। 1934 में उनकी कृतियों के आधार पर 'नवजीवन' और 'सेवासदन' फिल्में बनीं और हिंदी के अलावा अन्य भाषाओं में भी फिल्में बनीं। जैसे- उर्दू लेखक मंटो की कहानी पर बनी फिल्म 'अछूत कन्या' सुपरहिट रही थी। इसी तरह बांग्ला लेखक शरतचंद्र के उपन्यास 'देवदास' पर आधारित हिंदी में चार फिल्में बनीं जो सफल भी रहीं। परिणामस्वरूप, अधिकांश फिल्में हिंदी, उर्दू और बंगाली भाषा की रचनाओं पर आधारित बनीं। सत्यजीत रॉय ने प्रेमचंद की कहानी 'शतरंज के खिलाड़ी' नाम से एक फिल्म बनाई जो हिट रही। भगवतीचरण वर्मा के उपन्यास 'चित्रलेखा' पर भी फिल्म बनी थीं। 1965 में इसी नाम से आर.के. नारायण के अंग्रेजी उपन्यास 'गाइड' पर आधारित फिल्म बनी थी, जिसे काफी लोकप्रियता मिली थी। फनीश्वरनाथ रेणु की 'तीसरी कसम' उर्फ मारे गए गुलफाम की चर्चित फिल्म 'तीसरी कसम' का निर्देशन बासु भट्टाचार्य ने किया था। 'हिना' फिल्म मोहन राकेश की 'मलबे का मलिक' कहानी पर बनी थी। कृष्ण चंदर की कहानी पेशावर एक्सप्रेस' पर 2004 में 'वीर जारा' फिल्म बनायी गई थी। इसी तरह पांडेय बेचन शर्मा, चतुरसेन शास्त्री, यशपाल, धर्मवीर भारती, अमृतलाल नागर जैसे हिन्दी साहित्यकारों की रचनाओं पर भी फिल्में बनीं।

साहित्य और सिनेमा दोनों ही हमें समाज के विभिन्न पक्षों की जानकारी देते हैं। कई बार समाज में हो रही घटनाओं के समसामयिक परिणाम भी हम सिनेमा और साहित्य में देख सकते हैं। जैसे आजादी के बाद हीरन गुप्ता ने बंकिम चंद्र चटर्जी के उपन्यास पर आधारित फिल्म 'आनंदमठ' बनाई। इस फिल्म में देश को आजाद कराने वाले लोगों के बलिदान को प्रमुखता से दिखाया गया है।'तमस' फिल्म भीष्म सहानी के उपन्यास पर आधारित थी जो भारत विभाजन की पृष्ठभूमि में प्रचलित आम भावना को प्रमुखता से दर्शाती है। प्रेमचंद की कहानी 'सद्गति' पर प्रसिद्ध निर्माता सत्यजीत राय ने इसी नाम से एक फिल्म बनाई थी जिसमें भारत में उच्च वर्ग द्वारा निचली जातियों के शोषण को उजागर किया गया था। प्रेमचंद के प्रसिद्ध उपन्यास 'गोदान' पर 1963 में इसी नाम से फिल्म बनी थी। इसमें उस समय के भारतीय जीवन को दर्शाने का हर संभव प्रयास किया गया है। चंद्रप्रकाश द्विवेदी ने अमृता प्रीतम के पंजाबी उपन्यास 'पिंजर' पर आधारित हिंदी में इसी नाम से एक फिल्म बनाई।

2001 में 'गदर' उपन्यास पर आधारित फिल्म बनी थी, जिसमें भारत के उस विभाजन के दर्द को बयां किया गया था जिसमें मासूम महिलाएं जहर की तरह साम्प्रदायिकता की शिकार हुई थीं।

कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि आज तक हिंदी साहित्य पर आधारित कई फिल्में बन चुकी हैं। साहित्य और सिनेमा हमेशा एक दूसरे के विस्तार और समाज को प्रभावित करने में सहयोग करते रहे हैं। साहित्य ने समाज में मूल्यों की स्थापना में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। सिनेमा भी समय-समय पर अपने अलग-अलग उद्देश्यों के साथ समाज के सामने आया है। हिंदी साहित्य और सिनेमा के कारण आज हिंदी भाषा विश्वभाषा बन रही है। इस प्रकार सिनेमा और साहित्य दोनों ने समाज के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. http%@@www-pravakta-com
2. http%@@www-pravakta-com
3. 'आधुनिक हिंदी सिनेमा का एक सामाजिक और राजनैतिक अध्ययन-राम अवतार अग्निहोत्री- पृ. क्र. 1
4. 'सिनेमा और साहित्य- हरीश कुमार, पृ. क्र. 2
5. http%@@www-google-co-in
6. 'सिनेमा और साहित्य- हरीश कुमार, पृ. क्र. 2
7. 'हिंदी सिनेमा का सच- संपादक मृत्युंजय, पृ. क्र. 39
8. 'हिंदी सिनेमा का सामाजिक संदर्भ'- संपा. डॉ.भारती एन.के. पृ. क्र. 160
9. वहीं